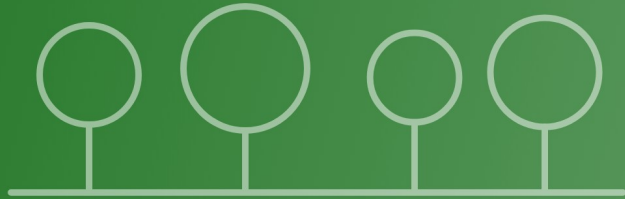


लेख 3 · इकाई III

पर्यावरण जीवविज्ञान



देववन, ओरण और सरना: जहाँ आस्था ने जंगल बचाए

भारत में हज़ारों ऐसे छोटे जंगल हैं जिन्हें किसी क़ानून ने नहीं, गाँव की आस्था ने बचाया। दिसंबर 2024 में सर्वोच्च न्यायालय ने भी इन्हें पहचान देने को कहा। जैव विविधता की दुनिया इन्हें किस नज़र से देखती है?

लेखक: डॉ. सौरभ कुमार | वैज्ञानिक, हिमालयन एनवायरनमेंट इंस्टीट्यूट, देहरादून

सारांश

पवित्र उपवन वे छोटे-बड़े वन हैं जिन्हें गाँव के लोग किसी देवता या पुरखे का निवास मानकर सदियों से बचाते आए हैं। राजस्थान में इन्हें ओरण, महाराष्ट्र में देवराई, झारखंड में सरना और हिमाचल में देववन कहते हैं। देश में 13,000 से अधिक उपवन दर्ज हैं और वास्तविक संख्या एक लाख से ऊपर आँकी जाती है। संरक्षण जीवविज्ञान इन्हें दुर्लभ प्रजातियों की शरणस्थली, जल-स्रोतों का रक्षक और जीन का भंडार मानता है। दिसंबर 2024 में सर्वोच्च न्यायालय ने इनके सर्वेक्षण और संरक्षण के निर्देश दिए। 2022 के वैश्विक जैव विविधता ढाँचे के '30×30' लक्ष्य में ऐसे समुदाय-संरक्षित क्षेत्रों की बड़ी भूमिका हो सकती है।

मुख्य शब्द: पवित्र उपवन, ओरण, देवराई, सरना, जैव विविधता, जैव विविधता अभिसमय (CBD), कुनमिंग-मॉन्ट्रियल ढाँचा, सामुदायिक संरक्षण

सतत विकास लक्ष्य: SDG 15 (थल पर जीवन) · SDG 13 (जलवायु कार्रवाई)

एक पत्ता भी बाहर नहीं जाता

मेघालय की खासी पहाड़ियों में शिलांग से कुछ दूर माओप्र्लांग नाम का गाँव है। गाँव से सटा एक घना जंगल है जिसमें जाने की मनाही नहीं, पर एक नियम है: यहाँ से कुछ भी बाहर नहीं ले जाया जा सकता। न लकड़ी, न फल, न एक सूखा पत्ता। गाँव वाले मानते हैं कि इस वन में उनके रक्षक देवता 'लबासा' का वास है।

नतीजा यह है कि आसपास की पहाड़ियाँ जहाँ घास के मैदान बन चुकी हैं, वहीं यह जंगल सदियों पुराने पेड़ों, ऑर्किड और काई से ढका खड़ा है।

ऐसे वन पूरे भारत में हैं। वैज्ञानिक इन्हें 'पवित्र उपवन' (sacred groves) कहते हैं। हर प्रदेश में इनका अपना नाम है।

एक परंपरा, अनेक नाम

अलग-अलग प्रदेशों में पवित्र उपवनों के स्थानीय नाम

 देववन हिमाचल, उत्तराखंड	 ओरण, देवबनी राजस्थान	 सरना, जाहेरथान झारखंड, छत्तीसगढ़	 देवराई महाराष्ट्र	 देवरकाडु, नागबन कर्नाटक
 काव, सर्पकाव केरल	 कोविल काडु तमिलनाडु	 लॉ किन्तांग मेघालय	 उमंग लाई मणिपुर	 जाहेरा, गरामथान ओडिशा, बंगाल

स्रोत: Malhotra et al. (2001) और क्षेत्रीय अध्ययन

चित्र 1: एक परंपरा, अनेक नाम: अलग-अलग प्रदेशों में पवित्र उपवन।

परंपरा कितनी पुरानी है?

वृक्ष और वन को पूजने की परंपरा भारत में बहुत पुरानी है। वैदिक साहित्य में 'अरण्यानी' यानी वन की देवी का सूक्त है (ऋग्वेद 10.146)। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में ऐसे वनों का उल्लेख है जिनमें पशुओं को अभय दिया गया था। सम्राट अशोक के शिलालेखों में जंगल जलाने की मनाही है।

पर पवित्र उपवन की परंपरा इन ग्रंथों से भी पुरानी और अधिकतर **मौखिक** है। पारिस्थितिकी विज्ञानी माधव गाडगिल और वनस्पति विज्ञानी वी.डी. वर्तक ने 1976 में पश्चिमी घाट की देवराइयों पर अपना प्रसिद्ध शोधपत्र छापा। उनका मत था कि यह प्रथा खेती से पहले के शिकारी-संग्राहक समाज तक जाती है और इसकी जड़ें आदिवासी और ग्रामीण लोक-धर्म में हैं, संस्कृत ग्रंथों में नहीं। इसीलिए अधिकतर उपवनों के देवता स्थानीय हैं: कोई ग्राम-देवी, कोई पुरखा, कोई नाग।

यह बात भारतीय ज्ञान परंपरा को समझने के लिए महत्वपूर्ण है। यह परंपरा केवल शास्त्रों में नहीं बसती। उसका एक बड़ा हिस्सा उन समुदायों के व्यवहार में है जिन्होंने कभी कुछ लिखा नहीं, पर पीढ़ी-दर-पीढ़ी नियम निभाए।

चार उपवन, चार कहानियाँ

हर प्रदेश का उपवन अपने भूगोल और समाज की छाप लिए हुए है। चार उदाहरण इस विविधता को दिखाते हैं।

चार प्रदेश, चार तरह के उपवन

 ओरण जैसलमेर, राजस्थान खेजड़ी और घास का खुला चरागाह; पशु चर सकते हैं, कुल्हाड़ी वर्जित	 देवरकाडु कोडगु, कर्नाटक काँफ़ी बाग़ानों के बीच सदाबहार वन के द्वीप	 सर्पकाव केरल घर के अहाते का झुरमुट, नाग के पत्थर और छोटा तालाब	 सरना झारखंड साल के पुराने पेड़; सरहुल का पर्व; कोई मूर्ति नहीं
---	--	--	--

रेखाचित्र: IKS JOURNAL

चित्र 2: चार प्रदेश, चार तरह के उपवन।

यहाँ कोई मूर्ति या मंदिर नहीं होता; पेड़ ही पूजा-स्थल हैं।

जैसलमेर का ओरण। थार के रेगिस्तान में ओरण घना जंगल नहीं, बल्कि खेजड़ी, केर, बेर और सेवण घास का खुला चरागाह होता है, जो किसी लोक-देवी या लोक-देवता के नाम छोड़ा गया है। यहाँ पेड़ काटना और हल चलाना वर्जित है, पर पशु चर सकते हैं। देगराय माता का ओरण इस क्षेत्र के सबसे बड़े ओरणों में गिना जाता है। अकाल के वर्षों में यही ओरण पशुधन को बचाते हैं।

कोडगु का देवरकाडु। कर्नाटक के कोडगु ज़िले में लगभग हर गाँव का अपना 'देवता का वन' है। ज़िले में एक हज़ार से अधिक देवरकाडु दर्ज किए गए हैं। ये काँफ़ी के बाग़ानों के बीच सदाबहार वन के द्वीपों की तरह बचे हैं और हॉर्नबिल जैसे पक्षियों को बसेरा देते हैं।

केरल का सर्पकाव। पुराने घरों के अहाते के एक कोने में पेड़ों और लताओं का घना झुरमुट छोड़ा जाता था, जिसमें नाग देवता के पत्थर और अक्सर एक छोटा तालाब होता है। आकार में ये कुछ सेंट भर के होते हैं, पर घनी बसावट के बीच मेंढकों, साँपों, तितलियों और औषधीय पौधों के लिए ये अंतिम ठिकाने हैं।

झारखंड का सरना। मुंडा, उराँव और हो समुदायों के गाँव में साल के पुराने पेड़ों का एक झुरमुट सरना कहलाता है। वसंत में जब साल फूलता है, तब यहाँ **सरहुल** का पर्व मनाया जाता है और गाँव का पाहन पूजा करता है। यहाँ कोई मूर्ति या मंदिर नहीं होता; पेड़ ही पूजा-स्थल हैं।

कितने हैं ये वन?

सही गिनती किसी के पास नहीं है, और यही सबसे बड़ी समस्या है। भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी के 2001 के अध्ययन में देश भर से **13,720** पवित्र उपवन दर्ज किए गए। शोधकर्ताओं

का अनुमान है कि वास्तविक संख्या एक से डेढ़ लाख के बीच हो सकती है।

आकार में ये बहुत भिन्न हैं। केरल का कोई सर्पकाव घर के पिछवाड़े के कुछ पेड़ों भर का होता है, जबकि राजस्थान के कुछ

ओरण हज़ारों हेक्टेयर में फैले हैं। सर्वोच्च न्यायालय के सामने रखे गए आँकड़ों के अनुसार राजस्थान में लगभग **25,000 ओरण** हैं जिनका कुल क्षेत्र करीब **6 लाख हेक्टेयर** है।

भारत में पवित्र उपवन: गिनती और अनुमान

देश भर में दर्ज (2001 का अध्ययन)	13,720
अनुमानित वास्तविक संख्या (न्यूनतम)	1,00,000 से अधिक

लगभग 25,000

राजस्थान में ओरण
सर्वोच्च न्यायालय, 2024

**लगभग 6 लाख
हेक्टेयर**

राजस्थान के ओरणों का कुल क्षेत्र

1,000 से अधिक

कोडगु (कर्नाटक) के देवरकाडु

स्रोत: Malhotra et al. (2001); Supreme Court of India (2024)

चित्र 3: भारत में पवित्र उपवन: कितने दर्ज हैं और कितने होने का अनुमान है।

उपवन के भीतर: एक छोटी दुनिया

बाहर से देखने पर उपवन पेड़ों का एक झुरमुट भर लगता है। भीतर जाने पर पता चलता है कि वह कई मंज़िलों वाला घर है, और हर मंज़िल के अपने निवासी हैं।

सबसे ऊपर पुराने, ऊँचे पेड़ों की **छतरी** है। सौ-दो सौ वर्ष पुराने इन पेड़ों के तनों में खोखल बन जाते हैं, जिनमें उल्लू, तोते, धनेश और गिलहरियाँ घर बनाती हैं। नए लगाए गए जंगल में ऐसे खोखल नहीं होते; इन्हें बनने में पीढ़ियाँ लगती हैं। छतरी के नीचे **लताओं** का जाल है, जो एक पेड़ से दूसरे तक पुल का काम करता है। तनों और डालियों पर **ऑर्किड, फ़र्न और काई** उगते हैं, जो हवा की नमी पर जीते हैं और इस बात के संकेत हैं कि यहाँ की हवा साफ़ और नम है।

ज़मीन पर गिरे पत्तों की मोटी परत है। इसे **कवक** और अनगिनत छोटे जीव धीरे-धीरे मिट्टी में बदलते हैं। इसी परत के कारण उपवन की मिट्टी स्पंज की तरह बारिश का पानी सोखती है और पास का झरना गरमी में भी नहीं सूखता।

इस पूरी व्यवस्था को चलाने वाले **चमगादड़, पक्षी और कीट** हैं। वे फूलों का परागण करते हैं और फल खाकर बीज दूर-दूर तक फैलाते हैं। उपवन के पेड़ों के बीज इन्हीं के सहारे आसपास के खेतों की मेड़ों और दूसरे वन-खंडों तक पहुँचते हैं। इस तरह

एक छोटा उपवन अपने आकार से कहीं बड़े इलाक़े को हरा रखने में योगदान देता है।

जीवविज्ञान की नज़र से

आधुनिक संरक्षण जीवविज्ञान इन उपवनों को चार कारणों से महत्वपूर्ण मानता है।

पहला, ये दुर्लभ प्रजातियों की शरणस्थली हैं। जहाँ आसपास का मूल जंगल कट चुका है, वहाँ उपवन उस पुराने जंगल का आखिरी बचा हुआ टुकड़ा होता है। केरल के एक काव से 1981 में *Kunstleria keralensis* नाम की लता की नई प्रजाति दर्ज हुई थी। पश्चिमी घाट की कई देवराइयों में ऐसे पेड़ मिलते हैं जो आसपास कहीं और नहीं बचे।

दूसरा, ये पानी के स्रोत बचाते हैं। अधिकतर उपवन किसी झरने, तालाब या नदी के उद्गम के पास हैं। पेड़ों की जड़ें बारिश का पानी ज़मीन में उतारती हैं। राजस्थान में ओरण के भीतर के तालाब और 'नाडी' सूखे के महीनों में पशुओं का सहारा होते हैं।

तीसरा, ये जीन का भंडार हैं। उपवनों में जंगली आम, जामुन, औषधीय पौधों और स्थानीय घासों की ऐसी किस्में बची हैं जो खेती और वानिकी से गायब हो चुकी हैं।

चौथा, ये संकटग्रस्त जीवों का घर हैं। जैसलमेर के ओरण उस गोडावण (ग्रेट इंडियन बस्टर्ड) के बचे हुए आवासों में हैं जो आज दुनिया के सबसे संकटग्रस्त पक्षियों में गिना जाता है।

एक उपवन, चार सेवाएँ



प्रजातियों की शरणस्थली

आसपास के कटे जंगल की दुर्लभ और स्थानिक प्रजातियाँ यहीं बची हैं।



जल-स्रोतों की रक्षा

झरनों और तालाबों के पास के पेड़ वर्षा-जल को ज़मीन में उतारते हैं।



जीन का भंडार

जंगली फलों, औषधीय पौधों और स्थानीय घासों की पुरानी क्रिस्में।



स्थानीय जलवायु

पुराने पेड़ कार्बन सँजोते हैं और आसपास का तापमान घटाते हैं।

रेखाचित्र: IKS JOURNAL

चित्र 4: एक पवित्र उपवन समाज को चार प्रकार की पारिस्थितिक सेवाएँ देता है।

विज्ञान की चेतावनी: छोटे टुकड़ों की सीमा

पारिस्थितिकी का 'द्वीप जैव-भूगोल' सिद्धांत कहता है कि जंगल का टुकड़ा जितना छोटा और अकेला होगा, उसमें उतनी ही कम प्रजातियाँ लंबे समय तक टिक पाएँगी। किनारों से धूप, हवा और बाहरी खरपतवार भीतर घुसते हैं।

इसलिए पवित्र उपवन बड़े संरक्षित क्षेत्रों का **विकल्प नहीं, उनके पूरक हैं**। एक-दो हेक्टेयर का उपवन बाघ या हाथी को नहीं बचा सकता। पर वह परागण करने वाले कीटों, पक्षियों, छोटे स्तनधारियों और पेड़ों की स्थानीय क्रिस्मों के लिए खेतों के समुद्र में एक द्वीप का काम करता है, और दो बड़े जंगलों के बीच 'पड़ाव' भी बन सकता है।

उपवन और जलवायु

पुराने पेड़ कार्बन के भंडार हैं। सौ वर्ष पुराना एक बड़ा पेड़ अपने तने, डालियों और जड़ों में कई टन कार्बन बाँधे रखता है, और पुराने वन की मिट्टी में उससे भी अधिक कार्बन जमा होता है। पवित्र उपवनों में पेड़ काटे नहीं जाते, इसलिए प्रति हेक्टेयर के हिसाब से ये अक्सर आसपास के प्रबंधित वनों से अधिक कार्बन सँजोए होते हैं।

उपवन अपने आसपास का स्थानीय मौसम भी बदलते हैं। घनी छतरी के नीचे तापमान खुले खेत से कई डिग्री कम रहता है, मिट्टी में नमी बनी रहती है और गरम हवा की मार कम पड़ती है। बढ़ती गरमी के दौर में गाँव के लिए यह एक प्राकृतिक शीतलक है।

पेरिस समझौते के अंतर्गत भारत ने वचन दिया है कि वह 2030 तक वन और वृक्ष-आवरण बढ़ाकर 2.5 से 3 अरब टन कार्बन डाइऑक्साइड के बराबर अतिरिक्त कार्बन सोखने की क्षमता बनाएगा। नए पौधे लगाना इसका एक रास्ता है, पर विज्ञान साफ़ कहता है कि खड़े पुराने वन को बचाना, नया लगाने से कहीं

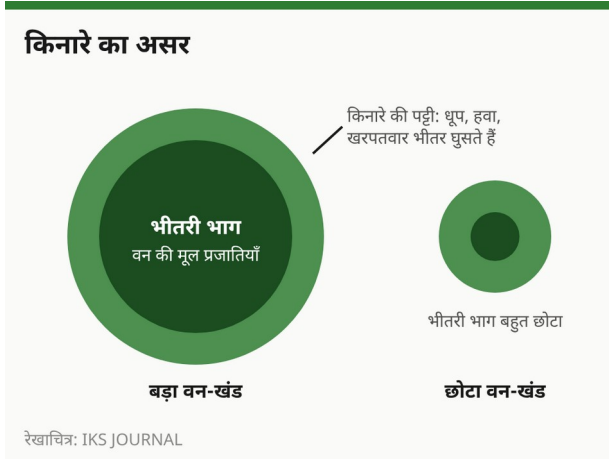
अधिक कारगर और सस्ता है। इस दृष्टि से पवित्र उपवन **SDG 13** (जलवायु कार्रवाई) में भी सीधा योगदान देते हैं।

शोध क्या कहता है: कोडगु का अध्ययन

पवित्र उपवनों के महत्त्व पर भावना से आगे बढ़कर आँकड़ों में बात करने वाले अध्ययनों में कर्नाटक के कोडगु ज़िले का काम सबसे अधिक उद्धृत है। शोधकर्ता शोनील भागवत और उनके साथियों ने 2005 में प्रकाशित अध्ययन में तीन तरह की जगहों की तुलना की: सरकारी आरक्षित वन, गाँवों के देवरकाडु और छायादार कॉफ़ी के बाग़ान। उन्होंने तीनों में पेड़ों, पक्षियों और बड़े कवकों (मशरूम) की प्रजातियाँ गिनीं।

नतीजे चौंकाने वाले थे। आकार में बहुत छोटे होने के बावजूद देवरकाडुओं में प्रजातियों की विविधता आरक्षित वन से बहुत कम नहीं निकली। कुछ संकटग्रस्त पेड़ और कवक देवरकाडुओं में दूसरी जगहों से अधिक मिले। अध्ययन का निष्कर्ष था कि घनी खेती वाले इलाक़ों में ये 'अनौपचारिक संरक्षित क्षेत्र' जैव विविधता का एक ऐसा जाल बनाते हैं जिसे सरकारी अभयारण्य अकेले नहीं बना सकते।

पर इसी शोध ने चेतावनी भी दी। कोडगु के कई देवरकाडु पिछली एक सदी में सिकुड़े हैं, और जिन उपवनों के चारों ओर प्राकृतिक वन की जगह खुले खेत आ गए, वहाँ वन के भीतरी भाग में रहने वाली प्रजातियाँ घटी हैं। यानी उपवन का मूल्य उसके आसपास के भू-दृश्य पर भी निर्भर है।



चित्र 5: बड़ा और छोटा वन-खंड। छोटे खंड में 'किनारे का असर' लगभग पूरे क्षेत्र तक पहुँच जाता है।

ओरण से गाँव को क्या मिलता है

पेड़ नहीं कटता, पर वन का उपयोग चलता रहता है



रेखाचित्र: IKS JOURNAL

चित्र 6: ओरण से गाँव को क्या मिलता है।

रेगिस्तान के गाँव की अर्थव्यवस्था खेती से अधिक पशुओं पर टिकी है। ऊँट, भेड़, बकरी और गाय पालने वाले रायका, रेबारी और अन्य समुदायों के लिए ओरण साल भर का चरागाह है। ओरण के भीतर की 'नाडी' या तालाब पशुओं को पानी देता है। खेजड़ी की फलियाँ (सांगरी) और केर के फल सुखाकर सब्जी बनती है, जो इस अंचल की पहचान है। कुमट से गोंद मिलता है और कई पौधों से घरेलू औषधियाँ।

नियम सीधे हैं: पेड़ नहीं कटेगा, हल नहीं चलेगा, और जो मिलेगा वह गिरा हुआ या तोड़ा हुआ होगा, काटा हुआ नहीं। अलवर की संस्था 'कृपाविस' तीन दशकों से ऐसे ओरणों को गाँव की समितियों के साथ मिलकर फिर से जीवित करने का काम कर

ओरण और पशुपालक: संरक्षण जो आजीविका भी है

पवित्र उपवन को केवल 'छूना मना है' वाली जगह समझना भूल होगी। राजस्थान के ओरण इसका सबसे अच्छा उदाहरण हैं, जहाँ संरक्षण और उपयोग साथ-साथ चलते हैं।

रही है, और 2024 का सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय इसी संस्था के प्रमुख की याचिका पर आया।

ओरण हमें यह सिखाते हैं कि संरक्षण का अर्थ हमेशा मनुष्य को बाहर रखना नहीं होता। जहाँ समुदाय की आजीविका उसी वन पर टिकी हो, वहाँ वही समुदाय उसका सबसे भरोसेमंद रखवाला होता है।

खतरे कहाँ से आ रहे हैं?

पिछले पचास वर्षों में बहुत-से उपवन सिकुड़े या मिट गए हैं। कारण कई हैं।

■ **राजस्व रिकॉर्ड की उलझन।** कई ओरण और देवराई सरकारी कागज़ों में 'बंजर' या 'राजस्व भूमि' के रूप में दर्ज हैं। ऐसी ज़मीन सड़कों, खनन और बिजली परियोजनाओं के लिए आसानी से दे दी जाती है। जैसलमेर के ओरणों में सौर और पवन ऊर्जा परियोजनाओं तथा बिजली की लाइनों को लेकर चला विवाद इसी का उदाहरण है। यहाँ स्वच्छ ऊर्जा और जैव विविधता, दोनों अच्छे लक्ष्य आपस में टकरा रहे हैं।

■ **आस्था का रूप बदलना।** जहाँ खुले पेड़ों के नीचे रखे पत्थर की जगह पक्का मंदिर बन जाता है, वहाँ अक्सर पेड़ कटते हैं और जंगल की जगह परिसर ले लेता है।

■ **नई पीढ़ी का घटता जुड़ाव** और शहरों की ओर पलायन।

■ **बाहरी खरपतवार,** जैसे लैंटाना और विलायती बबूल।

यह भी स्वीकार करना चाहिए कि परंपरा हर जगह आदर्श नहीं रही। कुछ उपवनों में महिलाओं या कुछ जातियों के प्रवेश पर रोक रही है। संरक्षण की नई व्यवस्था में समुदाय के सभी वर्गों की बराबर भागीदारी ज़रूरी है।

उपवनों के सामने चार खतरे

 कागज़ों की उलझन राजस्व रिकॉर्ड में 'बंजर' दर्ज; परियोजनाओं को आसानी से आवंटन	 आस्था का बदलता रूप खुले वन की जगह पक्का भवन, रास्ता और भीड़	 घटता जुड़ाव पलायन और नई पीढ़ी की दूरी	 बाहरी खरपतवार लैंटाना और विलायती बबूल का फैलाव
--	---	---	--

रेखाचित्र: IKS JOURNAL

चित्र 7: पवित्र उपवनों के सामने चार बड़े खतरे।

क़ानून ने क्या पहचाना?

भारत के क़ानून में इन उपवनों के लिए तीन रास्ते मौजूद हैं:

■ **वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972** में 2002 के संशोधन से 'सामुदायिक रिज़र्व' का प्रावधान जुड़ा।

■ **जैव विविधता अधिनियम, 2002** की धारा 37 के अंतर्गत राज्य किसी क्षेत्र को 'जैव विविधता विरासत स्थल' घोषित कर सकते हैं।

■ **वन अधिकार अधिनियम, 2006** ग्राम सभा को 'सामुदायिक वन संसाधन' के प्रबंधन का अधिकार देता है।

क़ानून और नीति में पवित्र उपवन

1972	1992	2002	2006	2022	2024
वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम	जैव विविधता अभिसमय (CBD)	जैव विविधता अधिनियम; सामुदायिक रिज़र्व का प्रावधान	वन अधिकार अधिनियम	कुनमिंग-मॉन्ट्रियल ढाँचा: 30×30 लक्ष्य	ओरणों पर सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय

चित्र 8: पवित्र उपवनों को पहचान देने वाले क़ानूनी और नीतिगत पड़ाव।

18 दिसंबर 2024 को सर्वोच्च न्यायालय ने टी.एन. गोदावर्मन मामले में राजस्थान के ओरणों पर एक महत्वपूर्ण निर्णय दिया। न्यायालय ने राजस्थान सरकार को हर ओरण का ज़मीनी और उपग्रह आधारित मानचित्रण करने तथा उन्हें वन के रूप में अधिसूचित करने को कहा। केंद्र सरकार से पूरे देश के पवित्र उपवनों का सर्वेक्षण करने और उनके प्रबंधन की नीति बनाने की सिफ़ारिश की गई। न्यायालय ने यह भी कहा कि इन वनों की

रखवाली करते आए समुदायों की भूमिका को औपचारिक मान्यता मिलनी चाहिए।

कुछ विशेषज्ञों ने यहाँ एक सावधानी भी जताई है: अगर 'संरक्षण' के नाम पर प्रबंधन पूरी तरह वन विभाग के हाथ में चला गया तो वही समुदाय बाहर हो जाएगा जिसने इन वनों को अब तक बचाया है।

तीन क़ानूनी रास्ते: कौन-सा किसके लिए

तीनों रास्तों में सबसे बड़ा अंतर यह है कि प्रबंधन का अधिकार किसके हाथ में रहता है। समुदाय को यह चुनाव सोच-समझकर करना चाहिए।

रास्ता	क़ानून	घोषणा कौन करता है	प्रबंधन किसके पास	समुदाय की भूमिका
सामुदायिक रिज़र्व	वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम 1972, धारा 36C	राज्य सरकार, समुदाय की सहमति से	प्रबंधन समिति; वन विभाग की प्रमुख भूमिका	समिति में प्रतिनिधित्व
जैव विविधता विरासत स्थल	जैव विविधता अधिनियम 2002, धारा 37	राज्य सरकार, स्थानीय निकाय से परामर्श के बाद	राज्य के नियमों के अनुसार; जैव विविधता प्रबंधन समिति	परामर्श और देखरेख
सामुदायिक वन संसाधन	वन अधिकार अधिनियम 2006, धारा 3(1)(i)	ग्राम सभा दावा करती है; ज़िला समिति मान्यता देती है	ग्राम सभा की अपनी समिति	पूरा प्रबंधन अधिकार

देश का पहला जैव विविधता विरासत स्थल कर्नाटक का **नल्लूर इमली उपवन** है, जिसे 2007 में घोषित किया गया। मेघालय में स्थिति अलग है: वहाँ संविधान की छठी अनुसूची के कारण अधिकांश वन सरकार के नहीं, समुदायों और स्वायत्त ज़िला परिषदों के हैं, और पवित्र वनों का प्रबंधन परंपरागत संस्थाएँ ही करती हैं।

दुनिया में पवित्र वन

आस्था के सहारे वन बचाने की परंपरा केवल भारत की नहीं है। लगभग हर महाद्वीप पर इसके उदाहरण मिलते हैं।

- **इथियोपिया** के उत्तरी पठार में, जहाँ लगभग सारा प्राकृतिक वन खेती के लिए कट चुका है, पुराने गिरजाघरों के चारों ओर छोड़े गए 'चर्च वन' ही मूल वन के बचे हुए टुकड़े हैं।
- **जापान** में शिंतो तीर्थों के चारों ओर के वन 'चिंजु नो मोरी' कहलाते हैं और घने शहरों के बीच भी सुरक्षित हैं।
- **केन्या** के तट पर मिजिकेंडा समुदाय के 'काया' वन 2008 में यूनेस्को की विश्व धरोहर सूची में शामिल किए गए।
- **घाना** और पश्चिम अफ़्रीका के कई देशों में गाँव के पवित्र वन नदियों के उद्गम की रक्षा करते हैं।

इसी साझे अनुभव को देखते हुए प्रकृति संरक्षण के अंतरराष्ट्रीय संघ (IUCN) और यूनेस्को ने 2008 में 'पवित्र प्राकृतिक

स्थलों' के प्रबंधन के लिए दिशानिर्देश जारी किए। उनका मूल सूत्र यह है कि ऐसे स्थलों का संरक्षण तभी टिकता है जब उनके परंपरागत रखवालों को निर्णय में बराबर का भागीदार बनाया जाए।

दुनिया के मंच पर

1992 के रियो सम्मेलन में **जैव विविधता अभिसमय** (CBD) बना। भारत 1994 में इसका पक्षकार बना। इसका अनुच्छेद 8(j) कहता है कि देश स्थानीय और देशज समुदायों के पारंपरिक ज्ञान और प्रथाओं का सम्मान और संरक्षण करेंगे।

दिसंबर 2022 में इसी अभिसमय के अंतर्गत **कुनमिंग-मॉन्ट्रियल वैश्विक जैव विविधता ढाँचा** स्वीकार हुआ। इसके 23 लक्ष्यों में सबसे चर्चित है लक्ष्य 3, जिसे '30×30' कहा जाता है: 2030 तक दुनिया की 30 प्रतिशत भूमि और 30 प्रतिशत समुद्र का प्रभावी संरक्षण।

30×30 लक्ष्य और भारत

भूमि का कितना प्रतिशत भाग संरक्षण में

भारत: राष्ट्रीय उद्यान और अभयारण्य

लगभग 5%

वैश्विक लक्ष्य, 2030 तक

30%

स्रोत: CBD (2022); पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय। समुदाय-संरक्षित क्षेत्र (OECM) इस अंतर को घटा सकते हैं।

चित्र 9: '30×30' लक्ष्य और भारत के औपचारिक संरक्षित क्षेत्र। अंतर को पाटने में समुदाय-संरक्षित क्षेत्रों की भूमिका हो सकती है।

भारत में राष्ट्रीय उद्यान और अभयारण्य मिलाकर देश की लगभग 5 प्रतिशत भूमि ही आती है, और घनी आबादी वाले देश में नए बड़े अभयारण्य बनाना कठिन है। इसीलिए यह ढाँचा 'अन्य प्रभावी क्षेत्र-आधारित संरक्षण उपायों' (OECM) को भी गिनता है, यानी ऐसे क्षेत्र जो सरकारी अभयारण्य नहीं हैं पर जहाँ संरक्षण वास्तव में हो रहा है। पवित्र उपवन इस परिभाषा में स्वाभाविक रूप से बैठते हैं। भारत ने 2024 में कोलंबिया के काली शहर में हुए सम्मेलन में अपनी अद्यतन राष्ट्रीय जैव विविधता कार्ययोजना प्रस्तुत की, जिसमें इसी ढाँचे के अनुरूप 23 राष्ट्रीय लक्ष्य रखे गए हैं।

करके देखें: अपने उपवन का दस्तावेज़ बनाइए

जैव विविधता अधिनियम, 2002 के अनुसार हर ग्राम पंचायत और नगर निकाय में एक **जैव विविधता प्रबंधन समिति** होनी चाहिए, जिसका मुख्य काम 'लोक जैव विविधता रजिस्टर' बनाना है। इस रजिस्टर में गाँव के पेड़-पौधों, जीव-जंतुओं और उनसे जुड़े पारंपरिक ज्ञान का ब्योरा दर्ज होता है। आपके गाँव या क़स्बे का पवित्र उपवन इसमें दर्ज है या नहीं, यह पता करना पहला क़दम है।

विद्यार्थी, शिक्षक और युवा समूह मिलकर यह काम कर सकते हैं:

- **सीमा नापें।** मोबाइल फ़ोन के नक्शे वाले ऐप से उपवन की परिधि पर चलकर उसकी सीमा और क्षेत्रफल दर्ज करें।
- **पेड़ गिनें।** बड़े पेड़ों की सूची बनाएँ: स्थानीय नाम, अनुमानित मोटाई और संख्या। जिन पेड़ों का नाम न पता हो, उनकी पत्ती और छाल की तस्वीर लें।
- **नियम लिखें।** बुजुर्गों से पूछें कि उपवन के क्या नियम रहे हैं, कौन-सा पर्व कब होता है और देखरेख कौन करता है।
- **बदलाव दर्ज करें।** पिछले बीस-तीस वर्षों में उपवन घटा है या बढ़ा है? कहाँ अतिक्रमण या कटाई हुई?
- **सौंपें।** यह पूरा ब्योरा पंचायत की जैव विविधता प्रबंधन समिति और राज्य जैव विविधता बोर्ड को दें।

सर्वोच्च न्यायालय ने जिस सर्वेक्षण की बात कही है, वह सरकारी अमले के भरोसे वर्षों लेगा। गाँव के स्तर पर बना ऐसा दस्तावेज़ उस काम को आसान करेगा और उपवन के कानूनी दावे को मज़बूत भी।

क्या आप जानते हैं?

- भारत दुनिया के 17 'महा-विविधता' वाले देशों में है और दुनिया के 36 जैव विविधता हॉटस्पॉट में से 4 के हिस्से भारत में हैं।
- दुनिया की लगभग 2.4 प्रतिशत भूमि वाले भारत में दर्ज प्रजातियों का लगभग 7 से 8 प्रतिशत हिस्सा मिलता है।
- खेजड़ी राजस्थान का राज्य वृक्ष है और गोडावण राज्य पक्षी।
- अंतरराष्ट्रीय जैव विविधता दिवस हर वर्ष 22 मई को मनाया जाता है।
- 'देवराई' शब्द 'देव' और 'राई' (वन) से बना है।

पाठकों के चार प्रश्न

क्या पवित्र उपवन सरकारी जंगल होते हैं? हमेशा नहीं। कुछ वन विभाग की भूमि पर हैं, कुछ राजस्व भूमि पर, कुछ मंदिर न्यासों के नाम हैं, कुछ गाँव की साझी ज़मीन हैं और कुछ निजी

अहातों में। यही बिखरा हुआ स्वामित्व इनकी गिनती और सुरक्षा को कठिन बनाता है, और इसीलिए हर उपवन के कागज़ देखना पहला काम है।

क्या उपवन से कुछ भी लेना मना होता है? नियम हर जगह अलग हैं। माओप्लांग जैसे उपवनों में एक पत्ता तक बाहर नहीं जाता। कई देवराइयों में गिरी हुई सूखी लकड़ी और फल लिए जा सकते हैं, पर हरा पेड़ नहीं कटता। राजस्थान के ओरण में पशु चर सकते हैं, पर कुल्हाड़ी और हल वर्जित हैं। यह लचीलापन ही परंपरा की ताकत है: नियम स्थानीय ज़रूरत के हिसाब से बने हैं।

पक्का मंदिर बनने से उपवन को नुकसान क्यों होता है? जब खुले में रखे पत्थर की जगह भवन बनता है, तो उसके लिए पेड़ कटते हैं, फिर रास्ता, बिजली, दुकानें और भीड़ आती है। धीरे-

धीरे श्रद्धा का केंद्र वन से हटकर भवन हो जाता है, और पेड़ों की रक्षा का मूल कारण ही कमज़ोर पड़ जाता है। शोधकर्ता इस प्रक्रिया को उपवनों के सबसे बड़े आधुनिक खतरों में गिनते हैं।

क्या नया पवित्र उपवन बनाया जा सकता है? पेड़ लगाकर नया वन खड़ा किया जा सकता है, और कई गाँवों और संस्थाओं ने 'स्मृति वन' जैसे प्रयोग किए हैं। पर सदियों पुराने वन की मिट्टी, उसके कवक, लताएँ और उस पर निर्भर जीव कुछ दशकों में नहीं बनते। इसलिए पहला काम जो बचा है उसे बचाना है; नया लगाना उसके बाद आता है।

कक्षा में चर्चा के लिए

- अगर लोगों की आस्था कमज़ोर पड़ जाए तो क्या पवित्र उपवन बचेंगे? उन्हें बचाए रखने के और कौन-से कारण दिए जा सकते हैं?
- जैसलमेर में सौर ऊर्जा और ओरण की रक्षा, दोनों ज़रूरी हैं। आप इस टकराव का क्या हल सुझाएँगे?
- संरक्षण का अधिकार वन विभाग के पास होना चाहिए या ग्राम सभा के पास? दोनों पक्षों के तर्क लिखिए।
- अपने ज़िले के किसी पवित्र उपवन, पुराने पेड़ या तालाब का नाम और उससे जुड़ी मान्यता पता कीजिए।

निष्कर्ष

पवित्र उपवन इस बात का जीवित प्रमाण हैं कि संरक्षण के लिए हमेशा बाड़ और पहरेदार ज़रूरी नहीं होते; कभी-कभी एक साझा विश्वास और गाँव की पंचायत का नियम काफी होता है। पर आज केवल आस्था के भरोसे इन्हें नहीं छोड़ा जा सकता।

ज़रूरत तीन चीज़ों की है: हर उपवन का नक्शा और गिनती, कागज़ों में सही दर्जा, और प्रबंधन में उसी समुदाय की अगुवाई जिसने इसे बचाया है। दुनिया 30×30 के लक्ष्य के लिए जो रास्ता अब खोज रही है, भारत के गाँव उस पर सदियों से चल रहे हैं।

मुख्य बातें: याद रखने के लिए

- देश में 13,000 से अधिक पवित्र उपवन दर्ज हैं; वास्तविक संख्या एक लाख से ऊपर आँकी जाती है।
- अकेले राजस्थान में लगभग 25,000 ओरण हैं जो करीब 6 लाख हेक्टेयर में फैले हैं।
- 18 दिसंबर 2024 को सर्वोच्च न्यायालय ने राजस्थान के ओरणों के सर्वेक्षण और संरक्षण के निर्देश दिए।
- 2022 के वैश्विक जैव विविधता ढाँचे का लक्ष्य 2030 तक 30% भूमि और समुद्र का संरक्षण है; समुदाय-संरक्षित क्षेत्र इसमें गिने जा सकते हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. 'ओरण' किस राज्य के पवित्र उपवनों का नाम है?

(क) केरल (ख) राजस्थान (ग) मेघालय (घ) झारखंड

2. 1976 में गाडगिल और वर्तक का प्रसिद्ध अध्ययन किस क्षेत्र के पवित्र उपवनों पर था?

(क) थार मरुस्थल (ख) पूर्वी हिमालय (ग) पश्चिमी घाट (घ) छोटा नागपुर

3. कुनमिंग-मॉन्ट्रियल ढाँचे का लक्ष्य 3 क्या है?

(क) 2030 तक 30% भूमि और समुद्र का संरक्षण (ख) 2050 तक नेट ज़ीरो (ग) प्लास्टिक पर रोक (घ) 17 सतत विकास लक्ष्य

4. 'सामुदायिक रिज़र्व' का प्रावधान किस क़ानून में है?

(क) भारतीय वन अधिनियम, 1927 (ख) वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 (ग) पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 (घ) जल अधिनियम, 1974

5. 'द्वीप जैव-भूगोल' सिद्धांत के अनुसार छोटे और अकेले वन-खंड में क्या होता है?

(क) प्रजातियाँ बढ़ती हैं (ख) लंबे समय में कम प्रजातियाँ टिकती हैं (ग) कोई असर नहीं (घ) वर्षा बढ़ती है

उत्तर: 1 (ख) • 2 (ग) • 3 (क) • 4 (ख) • 5 (ख)

संदर्भ

- Gadgil, M. and Vartak, V.D. (1976). The sacred groves of Western Ghats in India. *Economic Botany* 30(2): 152-160.
- Malhotra, K.C., Gokhale, Y., Chatterjee, S. and Srivastava, S. (2001). Cultural and Ecological Dimensions of Sacred Groves in India. Indian National Science Academy, New Delhi, and Indira Gandhi Rashtriya Manav Sangrahalaya, Bhopal.
- Supreme Court of India (2024). T.N. Godavarman Thirumulpad v. Union of India, ओरणों से संबंधित निर्णय, 18 दिसंबर 2024।
- Convention on Biological Diversity (1992). Text of the Convention, Article 8(j). United Nations.
- Convention on Biological Diversity (2022). Kunming-Montreal Global Biodiversity Framework. Decision 15/4, COP 15, Montreal.
- भारत सरकार. वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 (2002 में संशोधित), धारा 36C; जैव विविधता अधिनियम, 2002, धारा 37; अनुसूचित जनजाति और अन्य परंपरागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006।
- ऋग्वेद, मंडल 10, सूक्त 146 (अरण्यानी सूक्त)।
- MacArthur, R.H. and Wilson, E.O. (1967). *The Theory of Island Biogeography*. Princeton University Press.
- Wild, R. and McLeod, C. (eds.) (2008). *Sacred Natural Sites: Guidelines for Protected Area Managers*. IUCN, Gland.
- Bhagwat, S.A., Kushalappa, C.G., Williams, P.H. and Brown, N.D. (2005). The role of informal protected areas in maintaining biodiversity in the Western Ghats of India. *Ecology and Society* 10(1): 8.
- Bhagwat, S.A. and Rutte, C. (2006). Sacred groves: potential for biodiversity management. *Frontiers in Ecology and the Environment* 4(10): 519-524.